

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का योगदान: एक ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन

गिरिराज सिंह

सहायक प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, महायोगी गुरु गोरखनाथ राजकीय
महाविद्यालय, बिथ्याणी यमकेश्वर, पौड़ी गढ़वाल (उत्तराखण्ड)

E-mail: <kasana020214@gmail.com>

सारांश

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को केवल ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध राजनीतिक संघर्ष मानना उसकी व्यापक ऐतिहासिक प्रकृति को सीमित करना होगा। यह राजनीतिक स्वतन्त्रता के साथ सामाजिक पुनर्गठन, सांस्कृतिक पुनर्जागरण एवं राष्ट्रीय चेतना के विकास की बहुआयामी प्रक्रिया था। कांग्रेस के अतिरिक्त क्रान्तिकारी संगठनों, समाज सुधार आन्दोलनों, श्रमिक-किसान आन्दोलनों तथा विभिन्न वैचारिक धाराओं ने इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इसी सन्दर्भ में 1925 में डॉ० केशव बलिराम हेडगेवार द्वारा नागपुर में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना हुई। संघ ने सांस्कृतिक-राष्ट्रीय संगठन के रूप में सामाजिक संगठन, राष्ट्रीय चेतना, अनुशासन, आत्मनिर्भरता एवं सेवा-भाव को सुदृढ़ करने पर बल दिया। यद्यपि संघ ने स्वतन्त्रता आन्दोलन में औपचारिक राजनीतिक संगठन के रूप में भाग नहीं लिया, उसके अनेक स्वयंसेवकों ने व्यक्तिगत रूप से विभिन्न राष्ट्रीय आन्दोलनों में सहभागिता की। इस शोध-पत्र का उद्देश्य भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में संघ के प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष योगदान का विश्लेषण करना है। इसमें असहयोग, सविनय अवज्ञा एवं भारत छोड़ो आन्दोलनों के दौरान संघ एवं स्वयंसेवकों की भूमिका तथा दृष्टिकोण का विवेचन किया गया है। साथ ही, 1947 के विभाजन के दौरान साम्प्रदायिक हिंसा एवं मानवीय संकट में स्वयंसेवकों द्वारा शरणार्थियों की सहायता, राहत, भोजन एवं चिकित्सा सेवाओं तथा सामाजिक स्थिरता के लिए किए गए प्रयासों का अध्ययन किया गया है। शोध-पत्र संघ की आलोचनाओं एवं विवादों का भी सन्तुलित मूल्यांकन करता है, विशेषतः स्वतन्त्रता आन्दोलन में उसकी प्रत्यक्ष राजनीतिक सहभागिता तथा वैचारिक दिशा से जुड़े प्रश्नों का। निष्कर्षतः, संघ का योगदान मुख्यतः सामाजिक, सांस्कृतिक एवं वैचारिक स्तर पर राष्ट्र-संगठन एवं सामाजिक सुदृढ़ीकरण के रूप में देखा जा सकता है। अतः राष्ट्रीय आन्दोलन की समग्र समझ के लिए राजनीतिक संघर्षों के साथ राष्ट्र-निर्माण को प्रभावित करने वाले संगठनों एवं विचारधाराओं का अध्ययन भी आवश्यक है।

प्रमुख शब्द

[भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, राष्ट्र-निर्माण, सामाजिक-सांस्कृतिक संगठन, राष्ट्रीय चेतना, स्वतन्त्रता आन्दोलन, वैचारिक योगदान, समाज सुधार, विभाजन एवं राहत कार्य, ऐतिहासिक विमर्श।]

Centre For Studies of National Development, Meerut

Editorial Office : D-59, Shastri Nagar, Meerut - 250 004 (INDIA)

Ph. : 0121-2763765, +91-9997771669, +91-9412200765

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का योगदान: एक ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन

1. प्रस्तावना

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन आधुनिक विश्व के सबसे लम्बे, व्यापक तथा बहुआयामी स्वतन्त्रता संघर्षों में से एक रहा है। इसका आरम्भ 1857 के विद्रोह से माना जाता है, जो आगे चलकर 1947 में भारत की राजनीतिक स्वतन्त्रता की प्राप्ति तक निरन्तर विकसित होता रहा। यह आन्दोलन केवल ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध सत्ता परिवर्तन का प्रयास नहीं था, बल्कि भारतीय समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं नैतिक पुनर्गठन की एक ऐतिहासिक प्रक्रिया भी था। इस संघर्ष का लक्ष्य मात्र विदेशी शासन का अन्त नहीं, बल्कि एक ऐसे स्वतन्त्र राष्ट्र का निर्माण था जो आत्मनिर्भर, संगठित एवं मूल्यपरक हो। इस दीर्घकालिक आन्दोलन के दौरान भारत में विविध विचारधाराओं, राजनीतिक संगठनों, क्रान्तिकारी समूहों, समाज सुधार आन्दोलनों तथा जनआन्दोलनों का उद्भव हुआ। इन सभी शक्तियों ने अपने-अपने स्तर पर राष्ट्रीय चेतना के प्रसार एवं स्वतन्त्रता आन्दोलन को दिशा देने में योगदान किया। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का अध्ययन करते समय प्रायः भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, गांधीवादी आन्दोलनों तथा सशस्त्र क्रान्तिकारी गतिविधियों को केन्द्र में रखा गया है। किन्तु स्वतन्त्रता संघर्ष की प्रक्रिया केवल प्रत्यक्ष राजनीतिक आन्दोलनों तक सीमित नहीं थी। राजनीतिक संघर्षों के समानान्तर कुछ ऐसे संगठन भी सक्रिय थे, जिनका उद्देश्य तत्काल सत्ता प्राप्ति की अपेक्षा समाज के आन्तरिक संगठन, राष्ट्रीय चेतना के निर्माण तथा सांस्कृतिक-नैतिक मूल्यों के संरक्षण एवं सुदृढ़ीकरण पर केन्द्रित था। इसी व्यापक ऐतिहासिक सन्दर्भ में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (RSS) का उदय हुआ।

1925 में स्थापित राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने स्वयं को एक सांस्कृतिक-राष्ट्रीय संगठन के रूप में विकसित किया। स्वतन्त्रता आन्दोलन में संघ की भूमिका को लेकर इतिहासकारों एवं विद्वानों के मध्य विभिन्न मत देखने को मिलते हैं। एक पक्ष यह मानता है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने स्वतन्त्रता आन्दोलन के प्रत्यक्ष राजनीतिक संघर्षों में सक्रिय सहभागिता नहीं की तथा वह मुख्य आन्दोलनों से दूरी बनाए रहा। वहीं दूसरी ओर, यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि संघ ने भारतीय समाज के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक आधार को सुदृढ़ करने का कार्य किया, जो स्वतन्त्रता प्राप्ति तथा स्वतन्त्र भारत की स्थिरता के लिए आवश्यक था।

2. शोध-पत्र के उद्देश्य

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को उसके व्यापक ऐतिहासिक सन्दर्भ में समझते हुए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका का सन्तुलित विश्लेषण करना है। इस अध्ययन के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं—

1. भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन को केवल औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध राजनीतिक संघर्ष के रूप में न देखकर उसे एक बहुआयामी ऐतिहासिक प्रक्रिया के रूप में विश्लेषित करना, जिसमें सामाजिक, सांस्कृतिक एवं वैचारिक तत्वों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही हो।
2. भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की पृष्ठभूमि में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना, उसकी वैचारिक आधारशिला तथा संगठनात्मक संरचना का अध्ययन करना।

3. असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन एवं भारत छोड़ो आन्दोलन जैसे स्वतन्त्रता संघर्ष के प्रमुख चरणों के सन्दर्भ में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के दृष्टिकोण तथा उसके स्वयंसेवकों की प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहभागिता का विश्लेषण करना।
4. वर्ष 1947 के विभाजन से उत्पन्न साम्प्रदायिक हिंसा एवं मानवीय संकट के दौरान राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा किए गए सेवा, राहत एवं पुनर्वास कार्यों का मूल्यांकन करना।
5. भारतीय समाज में राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक संगठन, अनुशासन तथा सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के निर्माण में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के योगदान का अध्ययन करना।
6. स्वतन्त्रता आन्दोलन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका को लेकर विद्वानों द्वारा प्रस्तुत आलोचनाओं एवं विवादों का तटस्थ एवं ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर परीक्षण करना।
7. यह प्रतिपादित करना कि भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की समग्र समझ के लिए केवल प्रत्यक्ष राजनीतिक आन्दोलनों का अध्ययन पर्याप्त नहीं है, बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक संगठनों की भूमिका का मूल्यांकन भी अनिवार्य है।

3. शोध-पद्धति

प्रस्तुत शोध-पत्र में विषय की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए ऐतिहासिक, वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक शोध-पद्धति अपनाई गई है। अध्ययन के अन्तर्गत भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से सम्बन्धित घटनाओं, परिस्थितियों एवं प्रक्रियाओं का कालक्रमानुसार अध्ययन किया गया है। इसमें स्वतन्त्रता आन्दोलन के विभिन्न चरणों, विभाजन काल तथा स्वतन्त्रता के उपरान्त की परिस्थितियों का ऐतिहासिक विश्लेषण किया गया है। साथ ही, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना, उसके वैचारिक उद्देश्यों, संगठनात्मक कार्यप्रणाली तथा सामाजिक प्रभावों का क्रमबद्ध वर्णन करते हुए उनका तार्किक एवं आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। संघ की भूमिका की तुलना स्वतन्त्रता आन्दोलन के अन्य प्रमुख राजनीतिक एवं सामाजिक संगठनों से भी की गई है, ताकि उसके योगदान की विशिष्ट प्रकृति को व्यापक ऐतिहासिक सन्दर्भ में समझा जा सके।

शोध-कार्य मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिनमें पुस्तकों, शोध-पत्रों, ऐतिहासिक ग्रन्थों, आत्मकथाओं, संस्मरणों तथा प्रतिष्ठित इतिहासकारों के लेखन को सम्मिलित किया गया है। आवश्यकता के अनुसार विचार ग्रन्थों, भाषणों एवं समकालीन विवरणों का भी सहायक स्रोत के रूप में उपयोग किया गया है। उपलब्ध स्रोतों में निहित ऐतिहासिक तथ्यों, घटनाओं एवं विद्वानों के विभिन्न मतों का तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक परीक्षण किया गया है। अध्ययन में न तो किसी प्रकार का प्रशंसात्मक आग्रह अपनाया गया है तथा न ही आलोचनात्मक अतिरंजना; बल्कि उपलब्ध प्रमाणों एवं ऐतिहासिक सन्दर्भों के आधार पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका का निष्पक्ष, सन्तुलित एवं विश्लेषणात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

4. साहित्य समीक्षा

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन एवं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका से सम्बन्धित विषय पर पर्याप्त साहित्य उपलब्ध है, किन्तु अधिकांश अध्ययन मुख्यधारा के राजनीतिक आन्दोलनों पर केन्द्रित रहे हैं अथवा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को सीमित वैचारिक दृष्टि से प्रस्तुत करते हैं। इस शोध-पत्र के लिए उपलब्ध साहित्य की समीक्षा इस रूप में की जा सकती है—रमेशचन्द्र मजूमदार तथा बिपिन चन्द्र जैसे इतिहासकारों ने भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का व्यापक एवं तथ्यपरक विवरण प्रस्तुत किया है। उनके ग्रन्थों में स्वतन्त्रता संघर्ष के राजनीतिक, आर्थिक एवं वैचारिक आयामों का गहन विश्लेषण मिलता है, किन्तु सामाजिक-सांस्कृतिक संगठनों की भूमिका पर अपेक्षाकृत कम प्रकाश डाला गया है। डॉ० केशव बलिराम हेडगेवार के जीवन एवं

विचारों पर आधारित ग्रन्थ संघ की वैचारिक पृष्ठभूमि, उद्देश्यों तथा संगठनात्मक दृष्टिकोण को समझने में सहायक सिद्ध होते हैं। इन रचनाओं से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के राष्ट्र-निर्माण सम्बन्धी चिन्तन की स्पष्ट झलक मिलती है। माधव सदाशिव गोलवलकर की विचार मन्थन (*बंच ऑफ थॉट्स*) संघ की सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अवधारणा को समझने का एक महत्वपूर्ण वैचारिक स्रोत है, जिसमें उसके दीर्घकालिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक लक्ष्यों का विवेचन किया गया है।

रोमिला थापर, ज्योतिर्मय शर्मा तथा ज्ञानेन्द्र पाण्डेय जैसे विद्वानों के लेखन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ एवं हिन्दुत्व की विचारधारा पर आलोचनात्मक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया गया है। ये अध्ययन संघ की भूमिका को बहुलतावाद एवं धर्मनिरपेक्षता के सन्दर्भ में प्रश्नांकित करते हैं, जिससे विषय के सन्तुलित मूल्यांकन की सम्भावना बनती है। विभाजन एवं साम्प्रदायिक हिंसा पर ज्ञानेन्द्र पाण्डेय जैसे इतिहासकारों के अध्ययन उस कालखण्ड के मानवीय संकट की गहनता को रेखांकित करते हैं। इनके आलोक में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ द्वारा किए गए राहत एवं पुनर्वास कार्यों का विश्लेषण अधिक व्यापक सन्दर्भ में किया जा सकता है। समग्र रूप से उपलब्ध साहित्य यह संकेत करता है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका पर किए गए अध्ययन प्रायः समर्थनात्मक एवं आलोचनात्मक ध्रुवों में विभाजित रहे हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र इन दोनों दृष्टिकोणों को समन्वित करते हुए राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के योगदान का एक सन्तुलित, ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत करने का प्रयास करता है।

5. राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ: स्थापना एवं वैचारिक पृष्ठभूमि

5.1 राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना 27 सितम्बर 1925 को महाराष्ट्र के नागपुर नगर में डॉ० केशव बलिराम हेडगेवार द्वारा की गई। यह काल भारतीय इतिहास के संक्रमणकाल का प्रतिनिधित्व करता है, जब प्रथम विश्व युद्ध के उपरान्त देश राजनीतिक, सामाजिक एवं वैचारिक परिवर्तनों से गुजर रहा था। औपनिवेशिक शासन की दमनकारी नीतियों, आर्थिक शोषण तथा भारतीयों को राजनीतिक निर्णय-प्रक्रिया से दूर रखने के कारण जनसामान्य में व्यापक असन्तोष व्याप्त था। इसी वातावरण में स्वतन्त्रता आन्दोलन ने नई दिशा ग्रहण की तथा जनमानस में राष्ट्रीय चेतना का तीव्र विस्तार हुआ। डॉ० हेडगेवार प्रारम्भ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से सम्बद्ध रहे तथा उन्होंने महात्मा गांधी के नेतृत्व में चले असहयोग आन्दोलन में सक्रिय सहभागिता की। इस संघर्ष के दौरान उन्हें कारावास भी झेलना पड़ा। किन्तु प्रत्यक्ष राजनीतिक आन्दोलनों के अनुभव से वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि केवल आन्दोलनात्मक राजनीति के माध्यम से राष्ट्र का स्थायी पुनर्निर्माण सम्भव नहीं है। उनके अनुसार राजनीतिक स्वतन्त्रता तभी सार्थक हो सकती है, जब समाज आन्तरिक रूप से संगठित, अनुशासित एवं आत्मबल से परिपूर्ण हो। डॉ० हेडगेवार ने यह भी अनुभव किया कि भारतीय समाज जाति, भाषा, क्षेत्र एवं सम्प्रदाय के आधार पर गहरे विभाजनों से ग्रस्त है, जिससे राष्ट्रीय एकता कमजोर पड़ रही है। इसी सामाजिक विखण्डन को दूर करने तथा समाज को संगठित करने के उद्देश्य से उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना की। संघ की स्थापना किसी तात्कालिक राजनीतिक प्रतिक्रिया का परिणाम नहीं थी, बल्कि यह एक दीर्घकालिक सामाजिक-सांस्कृतिक प्रयास था, जिसका लक्ष्य भावी पीढ़ियों में राष्ट्रनिष्ठा, अनुशासन एवं संगठन चेतना का विकास करना था।

5.2 राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के वैचारिक उद्देश्य

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के उद्देश्य प्रारम्भ से ही सुविचारित एवं स्पष्ट रहे हैं। संघ का मूल लक्ष्य ऐसे नागरिकों का निर्माण करना रहा है, जो व्यक्तिगत हितों से ऊपर उठकर राष्ट्रहित को सर्वोपरि मानें। इस सन्दर्भ में संघ के वैचारिक उद्देश्यों को निम्नलिखित बिन्दुओं में समझा जा सकता है—

- प्रथम, राष्ट्रनिष्ठ नागरिकों का निर्माण। संघ का मानना है कि किसी भी राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसके चरित्रवान, अनुशासित एवं जागरूक नागरिकों में निहित होती है। इसी कारण स्वयंसेवकों के सर्वांगीण व्यक्तित्व विकास पर विशेष ध्यान दिया गया।

- *द्वितीय*, सामाजिक एकता एवं अनुशासन की स्थापना। संघ ने समाज में व्याप्त विभिन्न प्रकार के विभाजनों को राष्ट्रीय एकता के लिए बाधक माना। शाखा पद्धति के माध्यम से सामूहिक जीवन, समानता, सहयोग एवं अनुशासन की भावना को विकसित करने का प्रयास किया गया।
- *तृतीय*, भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का संरक्षण। संघ का विश्वास है कि भारतीय संस्कृति एवं परम्पराएँ राष्ट्र की आत्मा हैं। औपनिवेशिक शासन के प्रभाव से इन मूल्यों में क्षरण हो रहा था, अतः उनके संरक्षण एवं पुनर्जागरण को संघ ने अपना महत्वपूर्ण दायित्व माना।
- *चतुर्थ*, राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण। संघ का उद्देश्य केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करना नहीं था, बल्कि ऐसे राष्ट्रीय चरित्र का विकास करना था, जिसमें साहस, सेवा, त्याग एवं कर्तव्यबोध जैसे गुण विद्यमान हों।

इन उपर्युक्त उद्देश्यों के आधार पर संघ ने स्वयं को एक गैर-राजनीतिक, सांस्कृतिक संगठन के रूप में स्थापित किया। संघ का यह मत रहा कि राजनीति राष्ट्र जीवन का केवल एक पक्ष है, जबकि समाज एवं संस्कृति राष्ट्र की आधारशिला होते हैं। इसी वैचारिक दृष्टि के कारण संघ ने प्रत्यक्ष राजनीतिक आन्दोलनों से दूरी बनाए रखते हुए सामाजिक एवं सांस्कृतिक उत्थान को प्राथमिकता प्रदान की।

6. भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का स्वरूप एवं संघ का दृष्टिकोण

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन किसी एकरेखीय प्रक्रिया का परिणाम नहीं था, बल्कि यह विभिन्न ऐतिहासिक परिस्थितियों, सामाजिक संरचनाओं एवं वैचारिक प्रवृत्तियों के अन्तर्सम्बन्ध से विकसित हुआ एक बहुआयामी आन्दोलन था। 1857 के विद्रोह के पश्चात् भारतीय समाज में राजनीतिक चेतना का क्रमिक विकास हुआ, जिसने आगे चलकर संगठित राष्ट्रीय आन्दोलन का रूप धारण किया। विद्वानों ने सुविधा की दृष्टि से इस आन्दोलन को निम्नलिखित विभिन्न चरणों में विभाजित किया है—

6.1 उदारवादी चरण (1885-1905)

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रारम्भिक चरण उदारवादी चरण कहलाता है, जिसकी शुरुआत 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना से मानी जाती है। इस काल में दादाभाई नौरोजी, फिरोजशाह मेहता एवं गोपाल कृष्ण गोखले जैसे नेताओं ने संवैधानिक सुधारों, याचिकाओं एवं सम्वाद के माध्यम से ब्रिटिश शासन के भीतर सुधार लाने का प्रयास किया। यद्यपि इस चरण में जनभागीदारी सीमित थी, फिर भी इसने राजनीतिक चेतना, संगठनात्मक अनुभव एवं राष्ट्रीय विचारधारा की नींव रखी।

6.2 उग्रवादी चरण (1905-1918)

1905 के बंग-भंग विरोध के साथ भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन ने उग्रवादी स्वरूप ग्रहण किया। बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय एवं विपिन चन्द्र पाल जैसे नेताओं ने स्वराज को जन्मसिद्ध अधिकार घोषित किया। इस चरण में स्वदेशी, बहिष्कार, राष्ट्रीय शिक्षा एवं आत्मनिर्भरता पर बल दिया गया तथा क्रान्तिकारी गतिविधियों में भी वृद्धि हुई। इस दौर ने भारतीय समाज में आत्मसम्मान, साहस एवं बलिदान की भावना को प्रोत्साहित किया।

6.3 गांधीवादी जनआन्दोलन का चरण (1919-1942)

प्रथम विश्व युद्ध के बाद महात्मा गांधी के नेतृत्व में भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन ने व्यापक जनआन्दोलन का स्वरूप ग्रहण किया। असहयोग आन्दोलन, सविनय अवज्ञा आन्दोलन एवं नमक सत्याग्रह जैसे आन्दोलनों ने ग्रामीण जनता, महिलाओं, छात्रों एवं श्रमिक वर्ग को राष्ट्रीय संघर्ष से जोड़ा। यह चरण आन्दोलन की व्यापकता एवं प्रभावशीलता की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा। इसी कालखण्ड में, 1925 में, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना हुई। यद्यपि गांधीवादी आन्दोलन व्यापक था, फिर भी समाज में साम्प्रदायिक तनाव, जातिगत विभाजन एवं क्षेत्रीय असन्तोष बढ़ रहे थे। खिलाफत आन्दोलन के बाद की परिस्थितियों ने हिन्दू-मुस्लिम सम्बन्धों में तनाव को और गहरा कर दिया, जिससे राष्ट्रीय एकता प्रभावित हुई।

6.4 अन्तिम चरण (1942-1947)

भारत छोड़ो आन्दोलन के साथ स्वतन्त्रता संघर्ष अपने निर्णायक मोड़ पर पहुँचा। इस काल में ब्रिटिश शासन कमजोर पड़ चुका था, किन्तु साथ ही साम्प्रदायिक राजनीति एवं विभाजन की प्रवृत्तियाँ भी तीव्र हो गईं। स्वतन्त्रता के साथ विभाजन की त्रासदी ने यह स्पष्ट कर दिया कि केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता सामाजिक एकता की गारण्टी नहीं होती।

6.5 संघ का दृष्टिकोण

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का दृष्टिकोण स्वतन्त्रता आन्दोलन के अन्य संगठनों से भिन्न था। संघ का मानना था कि स्वतन्त्रता की स्थायित्वशीलता समाज की आन्तरिक शक्ति, संगठन एवं सांस्कृतिक एकता पर निर्भर करती है। यदि समाज भीतर से कमजोर एवं विभाजित रहेगा, तो राजनीतिक स्वतन्त्रता भी टिकाऊ नहीं हो सकती। संघ ने अनुभव किया कि गांधीवादी आन्दोलनों की व्यापकता के बावजूद समाज में अनुशासन एवं संगठन का अभाव बना हुआ है। इसी कारण संघ ने प्रत्यक्ष राजनीतिक संघर्ष के स्थान पर समाज-संगठन एवं चरित्र निर्माण को अपनी प्राथमिकता बनाया। शाखा प्रणाली के माध्यम से युवाओं में आत्मानुशासन, सेवा भावना एवं राष्ट्रीय चेतना का विकास किया गया। संघ की दृष्टि में स्वतन्त्रता अन्तिम लक्ष्य नहीं, बल्कि सशक्त, संगठित एवं सांस्कृतिक रूप से जागरूक राष्ट्र के निर्माण का एक साधन थी। इस प्रकार, भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के विभिन्न चरणों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि स्वतन्त्रता संघर्ष केवल सत्ता हस्तान्तरण की प्रक्रिया नहीं था, बल्कि यह सामाजिक एवं सांस्कृतिक पुनर्गठन का भी आन्दोलन था। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने इसी व्यापक दृष्टिकोण को अपनाया, जिसका दीर्घकालिक राष्ट्र-निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान रहा।

7. स्वतन्त्रता आन्दोलन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक एवं स्वयंसेवकों की भूमिका

भारतीय स्वतन्त्रता संघर्ष में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका को लेकर विद्वानों के बीच निरन्तर चर्चा होती रही है। स्वतन्त्रता आन्दोलन के इतिहास लेखन में प्रायः प्रत्यक्ष राजनीतिक आन्दोलनों, दलों एवं नेतृत्व पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया गया है, जबकि उन संगठनों की भूमिका अपेक्षाकृत कम आंकी गई है जिन्होंने समाज को वैचारिक, सांस्कृतिक एवं नैतिक स्तर पर संगठित करने का प्रयास किया। इस दृष्टि से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ० केशव बलिराम हेडगेवार तथा संघ से जुड़े स्वयंसेवकों की भूमिका का विश्लेषण विशेष महत्व रखता है।

7.1 डॉ० केशव बलिराम हेडगेवार की भूमिका

डॉ० केशव बलिराम हेडगेवार भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन के प्रारम्भिक चरण में एक सक्रिय राष्ट्रवादी कार्यकर्ता के रूप में उभरे। वे प्रारम्भ में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस से जुड़े रहे तथा महात्मा गांधी के नेतृत्व में चलाए गए 1920-21 के असहयोग आन्दोलन में उन्होंने सक्रिय सहभागिता की। इस आन्दोलन का उद्देश्य ब्रिटिश शासन के विरुद्ध जनआन्दोलन खड़ा करना तथा जनता में राष्ट्रीय चेतना का प्रसार करना था। डॉ० हेडगेवार ने इस कालखण्ड में अनेक सार्वजनिक सभाओं एवं बैठकों में भाग लिया तथा औपनिवेशिक शासन की नीतियों की तीव्र आलोचना की। उनकी गतिविधियों के कारण ब्रिटिश प्रशासन ने उन्हें सन्देह की दृष्टि से देखा तथा उन पर निगरानी रखी गई। राष्ट्रवादी कार्यों के परिणामस्वरूप उन्हें कारावास भी भोगना पड़ा, जो स्वतन्त्रता संघर्ष के प्रति उनकी प्रतिबद्धता को दर्शाता है। वर्ष 1925 में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना के पश्चात् डॉ० हेडगेवार ने संगठन को प्रत्यक्ष राजनीतिक आन्दोलनों से अलग रखने का निर्णय लिया। किन्तु इसका आशय स्वतन्त्रता आन्दोलन से दूरी बनाना नहीं था। उनका विचार था कि केवल राजनीतिक संघर्ष से राष्ट्र का सर्वांगीण उत्थान सम्भव नहीं है। उनके अनुसार, स्वतन्त्रता तभी स्थायी एवं अर्थपूर्ण हो सकती है जब समाज अनुशासित, संगठित एवं आत्मबल से युक्त हो। इसी उद्देश्य से उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को एक सांस्कृतिक एवं सामाजिक संगठन के रूप में विकसित किया, जो दीर्घकालीन

राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया में योगदान दे सके। इस प्रकार डॉ० हेडगेवार को एक ओर स्वतन्त्रता सेनानी तथा दूसरी ओर दूरदर्शी राष्ट्रवादी चिंतक के रूप में देखा जा सकता है।

7.2 स्वयंसेवकों की व्यक्तिगत भागीदारी

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने संगठनात्मक रूप से किसी भी प्रत्यक्ष राजनीतिक आन्दोलन में भाग न लेने की नीति अपनाई। इसके बावजूद ऐतिहासिक साक्ष्य यह संकेत देते हैं कि संघ से जुड़े अनेक स्वयंसेवकों ने व्यक्तिगत स्तर पर स्वतन्त्रता संघर्ष में सक्रिय भूमिका निभाई। संघ ने अपने स्वयंसेवकों पर राष्ट्रीय आन्दोलनों से दूर रहने का कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया, बल्कि उन्हें राष्ट्रहित में अपने विवेक के अनुसार निर्णय लेने की स्वतन्त्रता प्रदान की। संघ से जुड़े कई स्वयंसेवकों ने 1920-21 के असहयोग आन्दोलन में भाग लिया तथा विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार, सरकारी संस्थाओं से असहयोग तथा राष्ट्रीय जागरण से जुड़े कार्यक्रमों में योगदान दिया। इसी प्रकार 1930 के सविनय अवज्ञा आन्दोलन के अन्तर्गत आयोजित जंगल सत्याग्रह में भी अनेक स्वयंसेवकों ने सहभागिता की। यह आन्दोलन ब्रिटिश शासन द्वारा वन संसाधनों पर लगाए गए कठोर नियन्त्रणों के विरोध में था, जिसमें कई स्वयंसेवकों को गिरफ्तार किया गया।

इसके अतिरिक्त महात्मा गांधी द्वारा प्रारम्भ किए गए व्यक्तिगत सत्याग्रह में भी संघ से जुड़े अनेक व्यक्तियों ने भाग लिया। इस आन्दोलन के माध्यम से उन्होंने अहिंसक तरीके से ब्रिटिश शासन का विरोध किया तथा व्यक्तिगत साहस व त्याग का परिचय दिया। वर्ष 1942 के भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान संघ की संगठनात्मक भागीदारी को लेकर आलोचना हुई, किन्तु यह भी तथ्य है कि अनेक स्वयंसेवक व्यक्तिगत रूप से आन्दोलन से जुड़े रहे। कई स्वयंसेवकों ने भूमिगत गतिविधियों में भाग लिया, सन्देशों के आदान-प्रदान में सहायता की तथा आन्दोलनकारियों को सहयोग प्रदान किया। अनेक स्थानों पर उनकी गिरफ्तारी भी हुई। संघ का दृष्टिकोण यह था कि संगठन की संरचना को सुरक्षित रखते हुए स्वयंसेवकों को व्यक्तिगत स्तर पर राष्ट्रसेवा का अवसर दिया जाए।

8. भारत छोड़ो आन्दोलन (1942) एवं राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

भारत छोड़ो आन्दोलन भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम का एक महत्वपूर्ण मोड़ सिद्ध हुआ। अगस्त 1942 में महात्मा गांधी द्वारा प्रस्तुत 'करो या मरो' के आह्वान ने ब्रिटिश शासन के विरुद्ध देशव्यापी जनजागरण उत्पन्न किया। इस व्यापक जनआंदोलन के सन्दर्भ में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका को लेकर इतिहास लेखन में निरन्तर मतभेद एवं विवाद देखने को मिलते हैं।

8.1 संघ पर लगाए गए आरोप

भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान यह आरोप प्रायः लगाया गया कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने संगठनात्मक रूप से इस आन्दोलन में प्रत्यक्ष सहभागिता नहीं की। आलोचकों का यह तर्क रहा है कि जब देश का विशाल जनसमूह स्वतन्त्रता संघर्ष में सक्रिय रूप से सम्मिलित था, उस समय संघ का आन्दोलन से दूरी बनाए रखना उसकी राष्ट्रवादी चेतना एवं प्रतिबद्धता पर प्रश्न खड़े करता है। इस दृष्टिकोण से संघ की भूमिका कांग्रेस तथा अन्य सक्रिय आन्दोलकारी संगठनों की तुलना में सीमित मानी गई।

8.2 यथार्थपरक मूल्यांकन

उपर्युक्त आरोपों का विश्लेषण करते समय तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों एवं संघ की संगठनात्मक स्थिति को ध्यान में रखना आवश्यक है। 1942 तक राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ एक सुव्यवस्थित एवं अनुशासित सामाजिक संगठन के रूप में विकसित हो चुका था तथा ब्रिटिश शासन की सतर्क निगरानी में था। संघ नेतृत्व का यह आकलन था कि यदि संगठन को औपचारिक रूप से आन्दोलन में सम्मिलित किया गया, तो उस पर प्रतिबन्ध लगाए जाने की प्रबल सम्भावना थी, जिससे उसका संगठनात्मक अस्तित्व संकटग्रस्त हो सकता था। संघ की नीति यह थी कि संगठन की निरन्तरता एवं संरचना को सुरक्षित रखते हुए दीर्घकालिक राष्ट्रीय हितों पर ध्यान केन्द्रित किया जाए। स्वतन्त्रता के बाद राष्ट्र-निर्माण की प्रक्रिया में योगदान

देने के उद्देश्य से संगठन को अक्षुण्ण बनाए रखना एक रणनीतिक निर्णय माना गया। साथ ही, यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि अनेक संघ स्वयंसेवक व्यक्तिगत स्तर पर भारत छोड़ो आन्दोलन के दौरान भूमिगत गतिविधियों, जनसहयोग एवं विरोधात्मक प्रयासों में सम्मिलित रहे। विभिन्न क्षेत्रों में स्वयंसेवकों की गिरफ्तारी एवं दण्ड की घटनाएँ भी सामने आती हैं।

संघ का दृष्टिकोण अल्पकालिक आन्दोलनों की अपेक्षा दीर्घकालिक सामाजिक एवं राष्ट्रीय पुनर्निर्माण पर आधारित था। उसका विश्वास था कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत को सामाजिक समरसता, सांस्कृतिक चेतना एवं अनुशासित नागरिक समाज की आवश्यकता होगी। इस सन्दर्भ में संगठन की सुरक्षा एवं निरन्तरता को प्राथमिकता देना राष्ट्रविरोधी नहीं, बल्कि एक रणनीतिक एवं वैचारिक निर्णय के रूप में देखा जाना चाहिए।

9. विभाजन, साम्प्रदायिक हिंसा एवं स्वतन्त्रता काल में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका

1947 में भारत को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई, परन्तु इसके साथ ही देश को विभाजन जैसी अभूतपूर्व त्रासदी से भी गुजरना पड़ा। भारत-पाकिस्तान विभाजन ने उपमहाद्वीप के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय ढाँचे को गहराई से झकझोर दिया। इस अवधि में व्यापक स्तर पर दंगे, हत्या, लूट, बलात्कार एवं जबरन पलायन जैसी घटनाएँ हुईं। लाखों लोग अपने घर-परिवार से बिछुड़ गए तथा शरणार्थी जीवन जीने को विवश हुए। यह संकट केवल राजनीतिक न होकर गहन मानवीय एवं सामाजिक संकट भी था, जिसमें त्वरित राहत, सुरक्षा एवं पुनर्वास की तत्काल आवश्यकता उत्पन्न हुई। ऐसे कठिन समय में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय रही। यद्यपि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ न तो एक राजनीतिक संगठन था तथा न ही उसने सत्ता संघर्ष में प्रत्यक्ष भागीदारी की, फिर भी उसके स्वयंसेवकों ने राष्ट्र-धर्म एवं मानवीय कर्तव्य के भाव से व्यापक सेवा कार्य किए। पंजाब, दिल्ली, उत्तर प्रदेश, राजस्थान आदि क्षेत्रों में संघ के स्वयंसेवकों ने शरणार्थी शिविरों की व्यवस्था, संचालन एवं प्रबन्धन में सक्रिय सहयोग प्रदान किया। इन शिविरों में विस्थापितों को अस्थायी आवास, भोजन तथा आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध कराने में संघ की महत्वपूर्ण भूमिका रही।

साम्प्रदायिक हिंसा के दौरान महिलाओं एवं बच्चों की सुरक्षा सबसे बड़ी चुनौती थी। इस सन्दर्भ में अनेक स्थानों पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ स्वयंसेवकों ने सुरक्षा व्यवस्था सँभाली तथा प्रभावित परिवारों को सुरक्षित क्षेत्रों तक पहुँचाने में सहायता की। कई अवसरों पर स्वयंसेवकों ने अपनी जान जोखिम में डालकर हिंसाग्रस्त क्षेत्रों से महिलाओं एवं बच्चों को बाहर निकालने का कार्य किया। यह सेवा किसी राजनीतिक उद्देश्य से नहीं, बल्कि मानवीय संवेदना एवं राष्ट्र-सेवा की भावना से प्रेरित थी। इसके अतिरिक्त, भोजन वितरण, प्राथमिक चिकित्सा, घायलों एवं बीमारों की देखभाल जैसे कार्यों में भी संघ स्वयंसेवकों का योगदान उल्लेखनीय रहा। उस समय सरकारी तन्त्र अत्यधिक दबाव में था तथा सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करना उसके लिए सम्भव नहीं था। ऐसे में स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो गई। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रशिक्षित एवं अनुशासित स्वयंसेवकों ने अपनी संगठन क्षमता का परिचय देते हुए राहत एवं पुनर्वास कार्यों को व्यवस्थित ढंग से संचालित किया।

विभाजन के पश्चात् पुनर्वास एक दीर्घकालिक प्रक्रिया सिद्ध हुई। शरणार्थियों को नए स्थानों पर बसाने, आजीविका के साधन उपलब्ध कराने तथा सामाजिक पुनर्स्थापन में सहायता की आवश्यकता थी। इस चरण में भी संघ स्वयंसेवकों ने स्थानीय स्तर पर सहयोग प्रदान किया तथा विस्थापितों को आत्मनिर्भर बनाने के प्रयास किए। समग्र रूप से देखा जाए तो स्वतन्त्रता एवं विभाजन के काल में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका राजनीतिक संघर्ष की नहीं, बल्कि मानवीय, सामाजिक एवं राष्ट्रीय सेवा की रही, जिसने राष्ट्रीय आपदा के समय समाज की व्यावहारिक आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास किया।

10. राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का योगदान

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन केवल औपनिवेशिक शासन से मुक्ति तक सीमित नहीं था, बल्कि उसका व्यापक उद्देश्य समाज में ऐसी राष्ट्रीय चेतना का निर्माण करना भी था, जो विभिन्न वर्गों एवं समुदायों को एक सूत्र में बाँध सके। इस प्रक्रिया में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका को महत्वपूर्ण माना जाता है। संघ ने प्रत्यक्ष राजनीतिक गतिविधियों से दूरी बनाए रखते हुए संगठन, अनुशासन एवं सांस्कृतिक एकता के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना को सुदृढ़ करने का प्रयास किया।

10.1 संगठन एवं अनुशासन

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का एक प्रमुख योगदान भारतीय युवाओं में संगठनात्मक क्षमता एवं अनुशासन की भावना का विकास रहा है। संघ का यह विश्वास था कि किसी भी राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसके संगठित एवं कर्तव्यनिष्ठ नागरिकों में निहित होती है। इसी विचार के आधार पर शाखा प्रणाली का विकास किया गया, जो संघ की कार्यपद्धति का मूल आधार बनी। शाखाओं के माध्यम से नियमित शारीरिक, बौद्धिक एवं नैतिक प्रशिक्षण प्रदान किया जाता था, जिससे युवाओं में आत्मविश्वास, समयपालन, नेतृत्व क्षमता एवं कर्तव्यबोध का विकास हुआ। सामूहिक गतिविधियों ने स्वयंसेवकों में सहयोग, अनुशासन एवं सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना को मजबूत किया। इस प्रशिक्षण का परिणाम यह हुआ कि संकट के समय संघ स्वयंसेवक संगठित एवं प्रभावी ढंग से कार्य करने में सक्षम सिद्ध हुए, जिसका उदाहरण विभाजन एवं दंगों के दौरान देखा जा सकता है।

10.2 सांस्कृतिक राष्ट्रवाद

राष्ट्रीय चेतना के निर्माण में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का दूसरा महत्वपूर्ण योगदान उसकी सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अवधारणा है। संघ ने भारत को केवल एक राजनीतिक या भौगोलिक इकाई न मानकर एक प्राचीन, सतत एवं सांस्कृतिक राष्ट्र के रूप में देखा। इस दृष्टिकोण के अनुसार, भारत की एकता उसकी साझा सांस्कृतिक परम्पराओं, मूल्यों एवं ऐतिहासिक अनुभवों में निहित है। संघ का मानना था कि राजनीतिक स्वतन्त्रता तभी सार्थक हो सकती है, जब नागरिकों में सांस्कृतिक आत्मबोध एवं राष्ट्रीय गौरव की भावना विकसित हो। इसी उद्देश्य से भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं परम्पराओं के प्रति सम्मान एवं जागरूकता को बढ़ावा दिया गया। इससे समाज में भारतीयता की भावना को बल मिला तथा राष्ट्रीय पहचान को सुदृढ़ करने में सहायता मिली।

11. राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की आलोचनाएँ

भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका को लेकर समय-समय पर विभिन्न आलोचनाएँ एवं विवाद सामने आए हैं। ये आलोचनाएँ मुख्यतः संघ की प्रत्यक्ष राजनीतिक भागीदारी की कमी तथा उसकी वैचारिक पृष्ठभूमि से सम्बन्धित हैं। इतिहासकारों एवं विद्वानों ने इन मुद्दों पर भिन्न-भिन्न दृष्टिकोण प्रस्तुत किए हैं, जिनका सन्तुलित मूल्यांकन आवश्यक है।

11.1 स्वतन्त्रता संघर्ष में सीमित प्रत्यक्ष सहभागिता

संघ पर लगाई गई प्रमुख आलोचना यह है कि उसने स्वतन्त्रता आन्दोलन के बड़े जनान्दोलनों में संगठनात्मक रूप से भाग नहीं लिया। आलोचकों के अनुसार, सविनय अवज्ञा आन्दोलन, नमक सत्याग्रह एवं भारत छोड़ो आन्दोलन जैसे निर्णायक संघर्षों के समय राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ एक सक्रिय संगठित शक्ति के रूप में सामने नहीं आया। इस आधार पर उसकी राष्ट्रवादी भूमिका पर प्रश्न उठाए जाते हैं। इसके विपरीत, संघ समर्थकों का तर्क है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ ने स्वयं को प्रारम्भ से ही एक सांस्कृतिक एवं सामाजिक संगठन के रूप में परिभाषित किया था, न कि राजनीतिक दल के रूप में। उनके अनुसार, संघ की भूमिका प्रत्यक्ष राजनीतिक संघर्ष के बजाय समाज को संगठित करने तथा राष्ट्रीय चरित्र के निर्माण की थी, जिसे वे स्वतन्त्रता आन्दोलन का एक आवश्यक एवं पूरक पक्ष मानते हैं।

11.2 वैचारिक आलोचनाएँ

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की दूसरी प्रमुख आलोचना उसकी हिन्दुत्व आधारित विचारधारा को लेकर की जाती है। कुछ विद्वानों का मत है कि यह विचारधारा संकीर्ण है तथा भारत की बहुलतावादी सामाजिक संरचना के अनुकूल नहीं है। उनके अनुसार, हिन्दुत्व की अवधारणा सामाजिक विविधता को सीमित कर सकती है। वहीं संघ का पक्ष यह है कि उसका हिन्दुत्व धार्मिक कट्टरता नहीं, बल्कि सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की अवधारणा है। संघ के अनुसार, यह विचारधारा भारत की साझा सांस्कृतिक विरासत, ऐतिहासिक निरन्तरता एवं मूल्यों पर आधारित है, न कि किसी विशेष धर्म के वर्चस्व पर।

12. समग्र मूल्यांकन

यदि भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का मूल्यांकन केवल प्रत्यक्ष राजनीतिक संघर्षों, जनान्दोलनों एवं सत्ता हस्तांतरण की प्रक्रिया के आधार पर किया जाए, तो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का योगदान अपेक्षाकृत सीमित प्रतीत होता है। संघ ने न तो कांग्रेस की भाँति औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संगठित राजनीतिक आन्दोलन चलाए तथा न ही सविनय अवज्ञा, नमक सत्याग्रह या भारत छोड़ो आन्दोलन जैसे संघर्षों में औपचारिक रूप से भाग लिया। इस दृष्टि से आलोचकों के कुछ तर्क उचित प्रतीत होते हैं। किन्तु यदि स्वतन्त्रता आन्दोलन को एक व्यापक एवं बहुआयामी प्रक्रिया के रूप में देखा जाए, तो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की भूमिका को भिन्न परिप्रेक्ष्य में समझा जा सकता है। स्वतन्त्रता संघर्ष केवल सत्ता प्राप्ति का आन्दोलन नहीं था, बल्कि वह समाज के पुनर्गठन एवं राष्ट्र-निर्माण की दीर्घकालिक प्रक्रिया भी था। इस व्यापक दृष्टिकोण से सामाजिक संगठन, राष्ट्रीय चरित्र निर्माण, अनुशासन एवं सेवा-भावना जैसे तत्व भी स्वतन्त्रता आन्दोलन के महत्वपूर्ण घटक माने जा सकते हैं। इस सन्दर्भ में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का योगदान विशेष महत्व रखता है। संघ ने समाज को संगठित करने, युवाओं में अनुशासन एवं कर्तव्यबोध विकसित करने तथा राष्ट्रीय चेतना को सुदृढ़ करने का प्रयास किया। उसकी शाखा प्रणाली ने समाज के विभिन्न वर्गों को जोड़ने का कार्य किया। विभाजन एवं दंगों के समय संघ स्वयंसेवकों द्वारा किए गए सेवा, सुरक्षा एवं पुनर्वास कार्य यह दर्शाते हैं कि संघ की भूमिका केवल वैचारिक नहीं, बल्कि व्यावहारिक भी रही।

अतः समग्र रूप से कहा जा सकता है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का योगदान प्रत्यक्ष राजनीतिक संघर्षों के क्षेत्र में सीमित अवश्य रहा, किन्तु सामाजिक संगठन, राष्ट्रीय चरित्र निर्माण एवं सेवा कार्यों के क्षेत्र में उसका योगदान महत्वपूर्ण एवं दीर्घकालिक सिद्ध होता है। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को एक ऐसे संगठन के रूप में देखा जा सकता है, जिसने स्वतन्त्रता की प्रक्रिया को अप्रत्यक्ष रूप से सुदृढ़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सन्दर्भ-सूची

1. मून, पी०, *डॉ० केशव बलिराम हेडगेवार और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का विकास*, नागपुर: भारतीय विचार साधना, 2005।
2. मजूमदार, रमेशचन्द्र, *भारत का स्वतन्त्रता संग्राम*, खण्ड 1-3, कोलकाता: फर्मा के० एल० मुखर्जी, 2007।
3. हेडगेवार, केशव बलिराम, *डॉ० हेडगेवार: व्यक्तित्व एवं विचारधारा*, नागपुर: सुरुचि प्रकाशन, 2008।
4. ठाकुर, रोमिला, *भारतीय इतिहास: दृष्टिकोण और विवेचना*, नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2009 (हिन्दी संस्करण)।
5. गोलवलकर, माधव सदाशिव, *विचार मन्थन (बंच ऑफ थॉट्स)*, बेंगलुरु: साहित्य सिंधु प्रकाशन, 2010।
6. पाण्डेय, ज्ञानेन्द्र, *विभाजन की स्मृतियाँ: हिंसा, राष्ट्रवाद और इतिहास लेखन*, नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2011।

7. सिंह, रामधारी, *आधुनिक भारत में राष्ट्रवाद की अवधारणा*, नई दिल्ली: मनोहर प्रकाशन, 2012।
8. वर्मा, सतीश, *भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन: वैचारिक और ऐतिहासिक आयाम*, नई दिल्ली: प्रभात प्रकाशन, 2014।
9. शर्मा, ज्योतिर्मय, *हिन्दुत्व: राजनीति, विचार और विमर्श*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2015।
10. पाण्डेय, बिपिन चन्द्र, *आधुनिक भारत का इतिहास*, नई दिल्ली: ओरिएण्ट ब्लैकस्वान, 2010 (हिन्दी संस्करण)।
11. चंद्र, बिपिन एवं मुखर्जी, मृदुला, *भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष: एक समग्र अध्ययन*, नई दिल्ली: पेंगुइन हिन्दी, 2013।
12. शुक्ल, रामचंद्र, *भारतीय संस्कृति और राष्ट्रवाद की चेतना*, वाराणसी: नागरी प्रचारिणी सभा, 2006।
13. अग्रवाल, आर० सी०, *भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास*, नई दिल्ली: एस० चांद एण्ड कम्पनी, 2011 (हिन्दी संस्करण)।
14. जोशी, श्रीधर, *राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ: वैचारिक पृष्ठभूमि और कार्यप्रणाली*, नागपुर: सुरुचि प्रकाशन, 2016।
15. मिश्र, कैलाशचंद्र, *स्वतन्त्रता आन्दोलन और सामाजिक चेतना का विकास*, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 2018।

★